Sahitya Manthan
A Peer-Reviewed, Open Access e-journal
ISSN: 2582 6867, Website: http://www.sahityamanthan.in
Year-2, Issue-10, Continuous Issue-16, November - December 2022

३. हर्षदेव माधव के साहित्य में ललितकला विमर्श

(काव्यकला के संदर्भ में)

कला किसी भी संस्कृति एवं विचारधारा का प्रतीक है, उसकी पहचान है । मानवजीवन में कला का महत्वपूर्ण स्थान है । भारतीय संस्कृति में कला की समृद्ध विरासत रही है । वह सत्यम् शिवम् एवं सुन्दरम् के आदर्श पर आधारित रही है । प्रत्येक कलात्मक प्रक्रिया का उद्देश्य सौन्दर्य तथा आनंद की अभिव्यक्ति होता है । प्राचीन भारत में कला को साहित्य और संगीत के समकक्ष मानते हुए मनुष्य के लिए उसे आवश्यक बताया गया है- भर्तृहरि ने अपने नीतिशतक में स्पष्टत: लिखा है कि- ' साहित्य, संगीत तथा कला से हीन मनुष्य साक्षात् पशु के समान है ।'[१]

' कला ' शब्द संस्कृत की ' कल ' धातु में कच् तथा टाप् प्रत्यय लगाने से बनता है । संस्कृत के कोश में यह शब्द विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त हुआ हैं- जैसे खण्ड, चंद्रमा की एक रेखा, शोभा, अलंकरण, कुशलता आदि । किन्तु इतिहास तथा संस्कृति में ' कला ' से तात्पर्य सौन्दर्य, सुन्दरता अथवा आनन्द से है । रीता तिवारी ने कला के संदर्भ मे लिखा हैं कि- ' संस्कृत भाषा में कला शब्द की सिद्धि ' कल ' धातु से हुई है । जिसका अर्थ ' संख्यान' है । संख्यान शब्द की सिद्धि " ख्या " धातु से न होकर जिसका अर्थ कथन, घोषणा करना या संवाद होता है; बल्कि '
संख्यान ' शब्द की सिद्धि ' चक्षिंङ्' व्यक्तायाम् वाचि ' से है जिसका अर्थ स्पष्ट वाणी में प्रकटन होता है ।'[२] इसी अर्थ में महाकवि कालिदास ने कुमारसंभव में इसी शब्द का प्रयोग इस प्रकार से किया है- ' श्रुताप्सरो गीतिरपि क्षणेऽस्मिन् हर: प्रसंख्यानवरो बभूव..... ।'[३] अर्थात् उस समय केवल शिव ही दिव्य अप्सराओं के गीतों को सुनकर भी आत्मानुसंधान में लगे रहे ।

कला शब्द इतना व्यापक है कि विभिन्न विद्धानों की परिभाषाएं केवल एक विशेष पक्ष को छूकर रह जाती है । भारतीय परंपरा के अनुसार कला उन सारी क्रियाओं को कहते हैं, जिसमें कौशल अपेक्षित हो-
मैथिलीशरण गुप्त- ' अभिव्यक्ति की कुशल शक्ति ही तो कला है ।'
रवीन्द्रनाथ टैगोर- ' जो सत्य है, सुंदर है वही कला है ।'
वासुदेवशरण अग्रवाल- ' कला किसी विचार या कल्पना को द्रश्यरूप देती है ।'
प्लेटो- ' कला सत्य की अनुकृति है ।'
टोल्सटोय- ' कला भावना की भाषा और तत्वत: अभिव्यक्ति है ।'
पाणिनि- कला शब्द की सिद्धि पाणिनि के ' पुंसि संज्ञायां घ: प्रायेण '[४] सूत्र के अनुसार हुई ।
शब्दकल्पद्रुम के अनुसार कला शब्द की व्युत्पत्ति- ' कलयति वृद्धितो धनं संगृह्णाति सेच्चिनोतीत्यर्थ ।'

वस्तुत: हृदय की गहराईयों से या सच्चे मन से मानवीय भावनाओं को व्यक्त करने के लिए की गई सुन्दर प्रस्तुति ही कला है । जैसे- मूर्ति बनाना, चित्र बनाना, भवन निर्माण, गीत, काव्य रचना आदि ।

कला का वर्गीकरण :

कला परंपरा इतनी अधिक प्राचीन है कि जिसका ज्ञान आज हम पुरातत्व विभाग के अन्वेषणों तथा प्राचीनतम साहित्य के अध्ययन से ही प्राप्त कर सकते हैं । वैदिक साहित्य में लोहारी, सोनारी, बुनाई, केशसंस्कारकला, चित्रकला, भैषज्यकला, संगीतकला, वास्तुकला नृत्यकला, नाट्यकला, काव्यकला आदि अनेक कलाओं का उल्लेख मिलता हैं । ऐसी मान्यता है कि वैदिक युग में कलाओं का कोई वर्गीकरण नहीं किया गया । भारतीय कला के इतिहास में कलाओं का सर्वप्रथम विभाजन ' मूल ' तथा ' अन्तर ' कलाओं के रूप में ही किया गया । इसके विभाजन कर्ता बभ्रुपुत्र पांचाल थे । इसके पश्चात् ऐसा ज्ञात होता है कि भरतमुनि ने कलाओं का वर्गीकरण मुख्य तथा गौण दो वर्गों में अपने ग्रंथ नाट्यशास्त्र में किया है । उनका यह विचार है कि नाट्यकला में अन्यकलाओं का उचित समावेश हो जाता है ।[५] आचार्य भरत के अनन्तर भारत के आध्यात्मवादी चिन्तकों ने कलाओं का विभाजन इस तरह किया हैं- (१) ललितकला- सौन्दर्य से सम्बन्धित कला (२) उपयोगी कला- मानव उपयोग से सम्बन्धित कला

ललितकला :

कलाओं का एक विभाजन रस तथा भाव-प्रधानता के आधार पर किया गया जिसे ललितकला से अभिहित किया गया । ' ललितस्य भाव इति लालित्यम् ।' अर्थात् जिस कला में अपेक्षाकृत अधिक सौन्दर्य

तथा आकर्षण का भाव हो उसे ललितकला कहा जाता है । प्राचीन भारत में ६४ कलाओं की गणना मुख्यरूप से वात्स्यायन द्वारा की गयी थी । किन्तु आगे चलकर सम्भवत कुछ ऐसी कलाओं की गणना पृथक रूप से की जाने लगी, जिनमें लालित्य था और इसी आधार पर उन्हें ललितकला के नाम से संबोधित किया जाने लगा । रीता तिवारी ने अपने ग्रंथ[६] में निम्नलिखित कलाओं को ललित कलाओं की श्रेणी में रखा हैं-

1. काव्य अथवा नाट्यकला
2. संगीतकला
3. वास्तुकला अथवा स्थापत्य कला
4. मूर्तिकला
5. चित्रकला

ललितकलाओं में ये पाँच भाव हमारे सामने आते हैं । जिसमें काव्य अर्थप्रधान तथा भावरूप है । इसी के साथ संगीतकला ध्वनि–प्रधान होने के साथ साथ भाव-प्रधान भी है । संगीत के साथ साथ नृत्यकला तथा नाट्यकला भी कला के भावरूप का विकास ही है । २० वीं शताब्दी के बाद ललितकलाओं के विभाजन में कुछ बदलाव आया है- जैसे (१) वास्तुकला (२) मूर्तिकला (३) संगीतकला (४) चित्रकला (५) नृत्य (६) साहित्य (७) सिनेमा

उपरोक्त कलाओं को निम्नलिखित प्रकार से भी श्रेणीकृत कर सकते हैं-

- साहित्य- काव्य, उपन्यास, लघुकथा, महाकाव्य आदि
- निष्पादन कलाएं- संगीत, नृत्य, रंगमंच
- दृश्यकलाएं- चित्रकला, मूर्तिकला
- मिडियाकला- फोटोग्राफी, सिनेमेटोग्राफी, विज्ञापन

हर्षदेव माधव का साहित्य एवं ललितकला विमर्श :

आधुनिक संस्कृत जगत् में बीसवीं शती के प्रतिनिधि कवि के रूप में पहचाने जाने वाले हर्षदेव माधव संस्कृत कविता में नव शैली के प्रवर्तक के रूप में प्रतिष्ठित हो गये हैं । वे विश्व मानवता के वाचक एवं मानवीय संवेदनाओं के गायक हैं । उन्होंने अपने रचना संसार में नवीन रूपों, प्रयोगों और विदेशी तथा देशज काव्यविधाओं को प्रस्थापित करके मानो संस्कृत भाषा और साहित्य को पूरे विश्व के साथ जोड़ दिया है । हर्षदेव माधव की प्रत्येक रचना अपने नवोन्मेष के कारण पाठक को चमत्कृत करती रहीं हैं । उनकी कविता में संस्कृत कविता का आधुनिकीकरण एवं आंतरराष्ट्रीयकरण है । आधुनिक संस्कृत कवि हरेकृष्णमेहेर की वाणी से निसृत कवि हर्षदेव के प्रति प्रशंसा सूक्ति-

अर्वाचीने मधुर-रचना वाङ्मये यस्य दीप्ता
शं-संपन्ना सुरभि-भरिता काव्यधर्माभिरामा ।
नव्या भव्या सहृदय मनोहर्षदाकर्षणीया
स ज्योतिष्माँल्लसतु सुकवि-र्माधवो हर्षदेव ॥ (डॉ.हरेकृष्णमेहेर)

गुजरात के सुप्रसिद्ध संस्कृत कवि हर्षदेव माधव आधुनिक संस्कृत साहित्य के सर्वाधिक अपारम्परिक कवि हैं । कालजयी संस्कृत काव्यों का इनका अध्ययन भी असमग्र है और भाषा अटपटी तथा प्रचलित मुहावरे से हटकर है । हर्षदेव माधव का नाम सुनते ही भारतभर में संस्कृत सेवियों के मानस में जो भाव उभरते हैं उनमें तीन चार संज्ञाएं अंतर्भूत रहतीं हैं । नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा की संस्कृत में अवतारणा, काव्यविधाओं में देशविदेश से नई विधाओं का आयात, कथ्य और शिल्प दोनों में नये प्रयोग आदि । प्रयोगधर्मी कविता के पर्याय के रूप में जाने जाने वाले डॉ. हर्षदेव माधव का एक नया आयाम पिछले दशक में और देखने को मिला है । वह है काव्यशास्त्र की परंपरा में भी कुछ नवीन विचारतत्वों और सिद्धांतों की अवतारणा ।

यह प्रयोगधर्मिता डॉ. हर्षदेव माधवने केवल काव्यक्षेत्र में ही नहीं दिखाई है, सब क्षेत्र में, कथा क्षेत्र में, डायरी शैली के लेखन में और नाट्यक्षेत्र में अनेक नए प्रयोग कर एक व्यापक फ़लक पर सर्जन की सरिता बहाई है । अपनी साहित्य साधना से आर्वाचीन संस्कृत जगत को स्तब्ध कर देने वाले इस साधक ने विश्वमंच पर अपनी एक पहचान दी है । ऐसे चमत्कारिक चिंतन के धनी डॉ. हर्षदेव माधव ने अपने व्यापक वर्ण्य विषय को चित्रात्मकता, इंद्रियग्राह्यता और साम्य सौन्दर्य से सजाकर अन्य भाषीय साहित्य के मध्य अग्रिम पंक्ति में बैठाने का श्रमसाध्य कार्य किया है । हर्षदेव माधव की कविता देशकाल की क्षुद्र सीमाओं से के परे वैश्विक चेतना का स्पर्श करती है । वे अपनी कविता में व्यापक विषयों को उठाते हैं तथा नवीन प्रयोगशीलता, संवेदनात्मकता, तथा विश्लेषणपरकता के साथ प्रस्तुत कर व्यष्टि से समष्टि की यात्रा तय करते हैं । प्रो.कुंदनमाली ने अपने विचार इस तरह रखते हैं- ‘ हर्षदेव की कविता संस्कृत काव्य में नवप्रवर्तन को संभव करने वाली कविता मानी जानी चाहिए ।[७]